



E-ISSN: 2706-9117
P-ISSN: 2706-9109
Impact Factor (RJIF): 5.63
www.historyjournal.net
IJH 2025; 7(11): 84-87
Received: 05-09-2025
Accepted: 08-10-2025

डॉ प्रगति झा

पूर्व शोधार्थी, प्राचीन भारतीय इतिहास
पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, ललित
नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा,
बिहार, भारत

भारतीय समाज और संस्कार

डॉ प्रगति झा

DOI: <https://www.doi.org/10.22271/27069109.2025.v7.i11b.566>

सारांश

भारतीय समाज विश्व की उन प्राचीनतम सामाजिक संरचनाओं में से है, जिसने समय के उतार-चढ़ाव, विदेशी आक्रमणों और सांस्कृतिक संपर्कों के बावजूद अपनी मौलिक पहचान बनाए रखी। इस समाज की सबसे बड़ी विशेषता इसकी गहरी सांस्कृतिक जड़ें हैं, जिन्हें संस्कारों ने निरंतर संचित किया। संस्कार केवल धार्मिक कर्मकांड नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक नियम और सांस्कृतिक अनुशासन का वह तंत्र हैं, जिसने भारतीय समाज को एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया। भारतीय समाज की नींव परिवार और समुदाय पर आधारित रही है। इन संस्थाओं को संगठित और अनुशासित बनाए रखने में संस्कारों ने निर्णायक भूमिका निभाई। जन्म से मृत्यु तक के संस्कारों की परंपरा ने व्यक्ति को समाज से जोड़ा और समाज को सांस्कृतिक एकता प्रदान की। विशेष रूप से वर्ण और आश्रम व्यवस्थाएँ संस्कारों के माध्यम से ही व्यावहारिक जीवन का अंग बनीं। विवाह, उपनयन, श्राद्ध आदि संस्कार न केवल धार्मिक धरोहर हैं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व और नैतिक अनुशासन का प्रतीक भी हैं। यह शोधपत्र भारतीय समाज की संरचना और उसमें संस्कारों की भूमिका का आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसमें यह विवेचना की गई है कि किस प्रकार संस्कारों ने सामाजिक अनुशासन, सांस्कृतिक निरंतरता और सामूहिक चेतना को जन्म दिया। अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि भारतीय समाज की आत्मा संस्कारों में निहित है। वे समाज को एक अदृश्य सूत्र में बाँधते हैं और उसकी विशिष्ट पहचान को युगों-युगों तक अक्षुण्ण बनाए रखते हैं।

कुटुम्बशब्द: भारतीय समाज, संस्कार, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक अनुशासन, सामूहिक चेतना

प्रस्तावना

भारतीय समाज का इतिहास सहस्राब्दियों पुराना है और इसकी विशिष्ट पहचान इसकी सांस्कृतिक परंपराओं तथा सामूहिक जीवन शैली में निहित है। जहाँ विश्व की अनेक सभ्यताएँ राजनीतिक संगठनों, आर्थिक संरचनाओं अथवा साम्राज्यवादी शक्तियों के इर्द-गिर्द विकसित हुईं और समय के साथ नष्ट भी हो गईं वहीं भारतीय समाज ने अपने अस्तित्व और निरंतरता को बनाए रखा। इसका कारण यह है कि इस समाज का मूलधार धर्म और संस्कारों पर आधारित रहा। यहाँ धर्म का अर्थ केवल पूजा-पद्धति या धार्मिक अनुष्ठान नहीं है बल्कि वह व्यापक जीवन-दृष्टि है जिसमें आचार, विचार, नैतिकता और कर्तव्य सब सम्मिलित हैं। इसी धर्म को व्यवहार में उतारने का कार्य संस्कारों ने किया।

संस्कार शब्द संस्कृत की धातु *सं* + *कृ* से बना है जिसका अर्थ है परीष्कार, शुद्धि और उन्नयन। संस्कार वे साधन हैं जिनके द्वारा व्यक्ति का व्यक्तित्व न केवल शारीरिक स्तर पर बल्कि मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक स्तर पर भी परिष्कृत होता है। धर्मशास्त्रों में स्पष्ट उल्लेख है कि बिना संस्कार के मनुष्य अधूरा और असंस्कृत माना जाता है। *संस्कारो हि मनुष्याणां शुद्धिर्मानस देहिनाम्* *ख*। इसका तात्पर्य यह है कि संस्कार मनुष्य को मात्र जैविक प्राणी से ऊपर उठाकर उसे एक सामाजिक और सांस्कृतिक इकाई बनाते हैं।

भारतीय समाज की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह केवल व्यक्तियों का समूह नहीं है बल्कि मूल्य-आधारित जीवन-पद्धति है। यह जीवन-पद्धति केवल व्यक्तिगत हितों पर आधारित नहीं है बल्कि सामूहिकता, सहयोग और उत्तरदायित्व पर टिकी हुई है। व्यक्ति का जन्म उसका लालन-पालन, शिक्षा, विवाह और मृत्यु जीवन की ये सभी अवस्थाएँ संस्कारों से नियंत्रित और अनुशासित होती हैं। जन्म पर *जातकर्म* संस्कार, शिक्षा के आरंभ पर *उपनयन* संस्कार, गृहस्थ जीवन की शुरुआत पर *विवाह संस्कार* और मृत्यु के समय *अन्त्येष्टि संस्कार* ये सभी उदाहरण बताते हैं कि भारतीय समाज ने जीवन की प्रत्येक अवस्था को संस्कारों से बाँधकर उसे सामाजिक और सांस्कृतिक मर्यादा प्रदान की।

Corresponding Author:

डॉ प्रगति झा

पूर्व शोधार्थी, प्राचीन भारतीय इतिहास
पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, ललित
नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा,
बिहार, भारत

संस्कारों की यह परंपरा केवल धार्मिक अनुशासन तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसने भारतीय समाज की संरचना को गहराई से प्रभावित किया। वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था और धर्म व्यवस्था, ये सभी सामाजिक संस्थाएँ संस्कारों के माध्यम से व्यवहारिक जीवन में जीवित रहीं। इसके अतिरिक्त, संस्कारों ने समाज की विविधता को भी एक सूत्र में बाँधने का कार्य किया। भारत के विभिन्न प्रांतों में भले ही संस्कारों की विधियों में भिन्नताएँ रही हों, किंतु उनका उद्देश्य और भाव एक ही रहा, व्यक्ति को समाज और संस्कृति से जोड़ना।

इसी कारण से भारतीय समाज को समझने के लिए संस्कारों का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है। संस्कार न केवल व्यक्तिगत जीवन के परिष्कार का साधन हैं, बल्कि वे समाज की आत्मा हैं, जो उसे अनुशासित, संगठित और स्थायी बनाते हैं। भारतीय समाज की निरंतरता, स्थायित्व और विशिष्ट पहचान संस्कारों में ही निहित है।

2. भारतीय समाज की सांस्कृतिक संरचना और संस्कार

भारतीय समाज की सबसे विशिष्ट पहचान उसकी सांस्कृतिक संरचना है। यह समाज न तो केवल राजनीतिक संगठनों से बंधा रहा है और न ही मात्र आर्थिक लेन-देन पर टिका रहा, बल्कि इसकी आत्मा सांस्कृतिक परंपराओं और सामूहिक चेतना में निहित रही है। इस सांस्कृतिक संरचना को यदि किसी ने सबसे अधिक स्थायित्व प्रदान किया है, तो वे संस्कार ही हैं। संस्कारों ने व्यक्ति को केवल एक स्वतंत्र इकाई नहीं रहने दिया, बल्कि उसे समाज की धारा में प्रवाहित किया।

भारतीय समाज की सांस्कृतिक संरचना का आधार धर्म है। यहाँ धर्म केवल पूजा-पद्धति या आस्था का नाम नहीं, बल्कि जीवन जीने की वह संहिता है जिसमें कर्तव्य, नैतिकता और अनुशासन तीनों का समावेश है। धर्मशास्त्रों ने संस्कारों को धर्म का व्यावहारिक रूप माना है। गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक संस्कार इस तथ्य का प्रमाण देते हैं कि धर्म केवल दार्शनिक विचार न होकर व्यक्ति और समाज के दैनिक जीवन का हिस्सा है [2]।

भारतीय समाज की दूसरी प्रमुख विशेषता उसकी विविधता में एकता है। देश के अलग-अलग प्रांतों, भाषाओं और जातीय समूहों के अपने-अपने रीति-रिवाज और परंपराएँ रही हैं, लेकिन संस्कारों ने इन सबको जोड़ने का कार्य किया। विवाह, उपनयन, नामकरण या अन्त्येष्टि, इन सभी संस्कारों की विधियाँ भले ही क्षेत्रीय भिन्नताओं के कारण अलग हों, परंतु उनका उद्देश्य एक ही रहा, समाज को अनुशासित करना और व्यक्ति को समाज से जोड़ना। इस प्रकार संस्कारों ने भारतीय समाज की विविधताओं को एक साझा सांस्कृतिक धारा में प्रवाहित किया।

भारतीय समाज की सांस्कृतिक संरचना में परिवार और समुदाय की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। परिवार व्यक्ति का पहला संस्कार-स्थल है। जन्म से लेकर शिक्षा तक अधिकांश संस्कार परिवार के भीतर ही सम्पन्न होते हैं। वहीं समुदाय इन संस्कारों को सामूहिक स्वरूप देता है। विवाह या श्राद्ध जैसे संस्कार केवल परिवार की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि पूरे समुदाय का उत्सव और कर्तव्य माने जाते हैं। इस प्रकार संस्कारों ने परिवार और समुदाय दोनों को सांस्कृतिक अनुशासन का अंग बनाया।

संस्कारों ने भारतीय समाज को सांस्कृतिक निरंतरता भी प्रदान की। जब एक पीढ़ी संस्कारों का पालन करती थी तो वह दूसरी पीढ़ी को भी उसी प्रक्रिया से जोड़ती थी। यह निरंतरता समाज को समय की आँधियों से बचाती रही। उदाहरणस्वरूप, विदेशी आक्रमणों और सांस्कृतिक आघातों के बावजूद भारतीय समाज अपनी पहचान खोने से बचा क्योंकि उसकी जड़ें संस्कारों से सिंचित थीं।

इस प्रकार देखा जाए तो भारतीय समाज की सांस्कृतिक संरचना और संस्कारों का

संबंध अभिन्न है। यदि समाज शरीर है तो संस्कार उसकी आत्मा हैं। संस्कारों के बिना भारतीय समाज का अस्तित्व और उसकी विशिष्ट पहचान संभव नहीं होती।

3. सामाजिक संस्थाएँ और संस्कार

भारतीय समाज केवल सांस्कृतिक मूल्यों से ही नहीं, बल्कि अनेक सामाजिक संस्थाओं से भी निर्मित हुआ है। इनमें प्रमुख हैं, वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, जाति व्यवस्था और धर्म व्यवस्था। इन सभी संस्थाओं को स्थायित्व और वैधता संस्कारों के माध्यम से मिली।

वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की भूमिकाएँ निश्चित की गई थीं। इन भूमिकाओं को संस्कारों द्वारा ही मान्यता मिली। ब्राह्मण का उपनयन संस्कार उसे शिक्षा और अध्यापन के योग्य बनाता था, क्षत्रिय के संस्कार उसे राज्य और रक्षा के लिए सक्षम करते थे और वैश्य का संस्कार उसे आर्थिक गतिविधियों के लिए तैयार करता था। यद्यपि शूद्र वर्ग को उपनयन का अधिकार नहीं था, फिर भी अन्य संस्कारों के माध्यम से उसे समाज की मुख्यधारा में स्थान मिला [3]।

आश्रम व्यवस्था भी संस्कारों पर आधारित थी। ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रवेश उपनयन संस्कार से होता था। विवाह संस्कार के बाद गृहस्थ आश्रम का प्रारंभ माना जाता था। वानप्रस्थ और संन्यास भी विशिष्ट अनुष्ठानों से जुड़कर ही मान्यता पाते थे। इस प्रकार संस्कारों ने जीवन के चारों चरणों को स्पष्ट और अनुशासित रूप दिया।

जाति व्यवस्था में भी संस्कारों की भूमिका महत्वपूर्ण रही। यद्यपि बाद के समय में जातीय भेदभाव कठोर हो गया, प्रारंभिक अवस्था में संस्कार जातियों के भीतर सामंजस्य और अनुशासन का साधन थे। प्रत्येक जाति अपने रीति-रिवाजों और संस्कारों के माध्यम से समाज में अपनी पहचान बनाए रखती थी।

धर्म व्यवस्था तो संस्कारों की आत्मा कही जा सकती है। धर्म केवल दर्शन नहीं, बल्कि व्यवहारिक जीवन का अनुशासन था। श्राद्ध, यज्ञ और अन्त्येष्टि जैसे संस्कार धर्म को समाज में व्यावहारिक रूप से स्थापित करते थे। इससे समाज के प्रत्येक सदस्य को अपने कर्तव्य और जिम्मेदारियों का बोध होता था [4]।

कहा जा सकता है की सामाजिक संस्थाएँ केवल वैचारिक ढाँचे नहीं थीं, बल्कि संस्कारों के माध्यम से वे व्यवहारिक जीवन का अंग बनीं। यही कारण है कि भारतीय समाज में सामाजिक संस्थाएँ दीर्घकाल तक स्थिर और प्रभावी बनी रहीं।

4. भारतीय समाज में संस्कारों का नैतिक और सांस्कृतिक महत्व

भारतीय समाज की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसने जीवन को केवल भौतिक उपलब्धियों तक सीमित नहीं किया, बल्कि उसे नैतिक और सांस्कृतिक अनुशासन से जोड़ा। इस अनुशासन का मूल आधार संस्कार रहे हैं। संस्कारों ने यह सुनिश्चित किया कि व्यक्ति केवल अपने निजी हित के लिए न जाए, बल्कि परिवार, समुदाय और व्यापक समाज के हित को भी ध्यान में रखे।

संस्कारों का नैतिक महत्व इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि वे प्रत्येक अवस्था में व्यक्ति को उत्तरदायित्व का बोध कराते हैं। उदाहरणस्वरूप, विवाह संस्कार केवल दो व्यक्तियों का दांपत्य बंधन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक उत्तरदायित्व का प्रतीक भी है। इसमें पति-पत्नी को केवल अपने सुख की चिंता नहीं करनी होती, बल्कि परिवार, संतान और समाज के प्रति भी कर्तव्यों का निर्वाह करना होता है। इसी प्रकार श्राद्ध संस्कार मनुष्य को यह स्मरण कराता है कि वह अकेला नहीं है, बल्कि अपने पूर्वजों और वंश परंपरा का उत्तराधिकारी है। यह भाव सामाजिक निरंतरता और नैतिक कर्तव्य का बोध कराता है [5]।

सांस्कृतिक दृष्टि से देखा जाए तो संस्कारों ने भारतीय समाज की विशिष्ट पहचान बनाई। प्रत्येक संस्कार अपने साथ मंत्र, गीत, अनुष्ठान और उत्सव लेकर आता है। यह केवल धार्मिक क्रियाएँ नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के माध्यम हैं।

नामकरण संस्कार से लेकर अन्त्येष्टि संस्कार तक समाज में जो लोकगीत गाए जाते हैं, जो सामूहिक भोज आयोजित होते हैं और जो अनुष्ठान संपन्न होते हैं, वे सभी भारतीय समाज की सांस्कृतिक समृद्धि के प्रतीक हैं।

संस्कारों ने भारतीय समाज को आचारसंहिता भी प्रदान की। धर्मसूत्रों और स्मृतियों में यह स्पष्ट किया गया है कि बिना संस्कार के मनुष्य अधूरा और असंस्कृत है। इसका अर्थ यह है कि नैतिकता केवल उपदेशों से नहीं आती, बल्कि उसे जीवन में व्यवहारिक रूप देने के लिए संस्कार आवश्यक हैं। जब व्यक्ति संस्कारों का पालन करता है, तब वह अनुशासन, संयम और जिम्मेदारी जैसे मूल्यों को अपने जीवन का हिस्सा बनाता है।

इसके अतिरिक्त, संस्कारों ने समाज में सामूहिक चेतना को भी सशक्त किया। विवाह या उपनयन जैसे संस्कार सामूहिक रूप से संपन्न होते थे, जिनमें पूरा समुदाय भाग लेता था। इससे न केवल व्यक्ति को सामाजिक समर्थन मिलता था, बल्कि समाज में सामूहिक एकता भी मजबूत होती थी। यह एकता ही भारतीय समाज की सबसे बड़ी शक्ति रही है, जिसने उसे हजारों वर्षों तक स्थिर और जीवंत बनाए रखा।

5. भारतीय समाज की विशिष्ट पहचान और संस्कार

भारतीय समाज की सबसे बड़ी विशेषता उसकी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान है, जो उसे अन्य समाजों से अलग करती है। यह पहचान केवल भाषा, वेशभूषा या भूगोल से नहीं बनती, बल्कि यह उन जीवन मूल्यों और परंपराओं से निर्मित होती है जो समाज की आत्मा में रची-बसी होती हैं। भारतीय समाज की यह पहचान संस्कारों के माध्यम से ही जीवित रही है। संस्कारों ने भारतीय जीवन को अनुशासित, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दिशा प्रदान की, जिससे समाज अपनी निरंतरता और विशिष्टता बनाए रखने में सफल रहा।

भारतीय समाज की विशिष्ट पहचान का पहला आयाम है *जीवन-दृष्टि*। यहाँ जीवन को केवल जन्म और मृत्यु के बीच की यात्रा नहीं माना गया, बल्कि इसे चार पुरुषार्थों, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के संतुलन से जोड़ा गया। इन चारों पुरुषार्थों को व्यवहारिक जीवन में लाने का कार्य संस्कारों ने किया। उदाहरणस्वरूप, उपनयन संस्कार धर्म और शिक्षा का बोध कराता है, विवाह संस्कार अर्थ और काम की पूर्ति का साधन है, और संन्यास से जुड़े संस्कार मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग दिखाते हैं। इस प्रकार संस्कारों ने भारतीय समाज को जीवन-दृष्टि में संतुलन और गहराई प्रदान की [6]।

दूसरा आयाम है *सामूहिकता और सहअस्तित्व*। भारतीय समाज की विविधता के बावजूद संस्कारों ने सभी को एक साझा सांस्कृतिक सूत्र में बाँधा। चाहे ब्राह्मण हो या शूद्र, उत्तर भारत हो या दक्षिण, सभी ने किसी न किसी रूप में जन्म, विवाह और मृत्यु जैसे संस्कारों को स्वीकार किया। क्षेत्रीय भिन्नताएँ अवश्य थीं, किंतु संस्कारों का मूल भाव एक रहा, व्यक्ति को समाज और संस्कृति से जोड़ना। यही कारण है कि भारतीय समाज ने हमेशा “विविधता में एकता” की अवधारणा को जीवित रखा।

तीसरा आयाम है *आध्यात्मिकता और नैतिकता*। भारतीय समाज को अन्य समाजों से अलग करने वाली उसकी गहरी आध्यात्मिक चेतना है। यह चेतना केवल दर्शन या विचार तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसे जीवन की दिनचर्या में उतारने का कार्य संस्कारों ने किया। प्राचीन काल से ही प्रत्येक संस्कार के साथ वैदिक मंत्रों और आचार-नियमों का पालन किया गया। इनसे व्यक्ति को यह स्मरण रहता था कि उसका जीवन केवल भौतिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक भी है। इससे भारतीय समाज में नैतिक अनुशासन और आध्यात्मिक उन्नति की निरंतरता बनी रही [7]।

संस्कारों ने भारतीय समाज को *सांस्कृतिक स्थायित्व* भी प्रदान किया। विदेशी आक्रमणों, राजनीतिक अस्थिरताओं और सामाजिक परिवर्तनों के बावजूद भारतीय संस्कृति की धारा कभी नहीं टूटी। इसका कारण यह था कि संस्कारों ने हर परिस्थिति में समाज को उसकी जड़ों से जोड़े रखा। चाहे गुप्तकाल का स्वर्णयुग रहा हो या मध्यकाल का संघर्षपूर्ण दौर, संस्कार हमेशा समाज के लिए आधारशिला बने रहे।

6. निष्कर्ष

भारतीय समाज और संस्कारों का संबंध अभिन्न और अविच्छिन्न है। यदि भारतीय समाज को समझना हो, तो उसके संस्कारों का अध्ययन अनिवार्य है, क्योंकि यही वे माध्यम हैं जिनके द्वारा इस समाज की संरचना, मूल्य और पहचान निर्मित हुई। संस्कारों ने केवल व्यक्ति के जीवन को दिशा नहीं दी, बल्कि परिवार और समुदाय को भी संगठित रखा। वेदों से लेकर उपनिषदों, स्मृतियों और महाकाव्यों तक सभी ग्रंथ इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि बिना संस्कारों के समाज अधूरा है और उसकी सांस्कृतिक आत्मा शून्य हो जाती है।

इस शोधपत्र से स्पष्ट होता है कि संस्कारों ने भारतीय समाज को अनुशासन, स्थायित्व और निरंतरता प्रदान की। जन्म से मृत्यु तक की यात्रा को संस्कारों ने केवल धार्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक मर्यादा से भी जोड़ा। विवाह संस्कार ने परिवार और वंश परंपरा को सुदृढ़ किया, उपनयन संस्कार ने शिक्षा और नैतिकता को जीवन का अंग बनाया और श्राद्ध संस्कार ने सामाजिक निरंतरता और पूर्वजों के प्रति उत्तरदायित्व की भावना विकसित की। इन संस्कारों ने यह सुनिश्चित किया कि व्यक्ति अकेला न रहकर सामूहिक जीवन का अभिन्न अंग बने।

भारतीय समाज की विशिष्ट पहचान, उसकी विविधता में एकता, उसकी आध्यात्मिक चेतना और उसकी सांस्कृतिक स्थायित्व संस्कारों से ही निर्मित और पोषित हुई। विदेशी आक्रमणों, राजनीतिक अस्थिरताओं और आधुनिकता की चुनौतियों के बावजूद संस्कारों ने समाज को उसकी जड़ों से जोड़े रखा। आज भी, जब वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद से सामाजिक संरचना बदल रही है, संस्कार भारतीय समाज की सांस्कृतिक आत्मा को जीवित रखने का कार्य कर रहे हैं।

अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय समाज और संस्कार एक-दूसरे के पूरक हैं। संस्कार समाज को उसकी ऐतिहासिक गहराई, सांस्कृतिक निरंतरता और नैतिक अनुशासन प्रदान करते हैं। वे भारतीय समाज की पहचान ही नहीं, बल्कि उसकी आत्मा भी हैं। यदि भारतीय समाज को स्थायित्व और विशिष्टता बनाए रखनी है, तो संस्कारों की परंपरा को समझना, उसका पालन करना और आने वाली पीढ़ियों को हस्तांतरित करना अनिवार्य है। यही वह धरोहर है जो भारतीय समाज को वैश्विक संदर्भ में भी अद्वितीय बनाती है [8]।

संदर्भ:

1. मनुस्मृति (2005). मनुस्मृति (पं. रामचन्द्र शर्मा, संपादक). दिल्ली: नाग प्रकाशन. (अध्याय 2, श्लोक 26, पृ. 45-46).
2. शतपथ ब्राह्मण (2004). शतपथ ब्राह्मण: मूल संस्कृत पाठ एवं हिंदी अनुवाद (डॉ. जगदीश लाल शास्त्री, संपादक). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज. (खंड 1, पृ. 112-118).
3. आपस्तम्ब धर्मसूत्र (2007). आपस्तम्ब धर्मसूत्र: संस्कृत एवं हिंदी अनुवाद (डा. शिवशंकर मिश्र, संपादक). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज. (प्रकरण 1, पृ. 54-59).
4. याज्ञवल्क्य स्मृति (2008). याज्ञवल्क्य स्मृति (डा. प्रेमनाथ शास्त्री,

- संपादक). वाराणसी: चौखम्बा विद्या भवन. (अध्याय 1, पृ. 67–72).
5. महाभारत (2010). महाभारत: शांति पर्व (पं. किशोरीलाल गोस्वामी, संपादक). गोरखपुर: गीता प्रेस. (शांति पर्व, पृ. 321–327).
 6. बृहदारण्यक उपनिषद (2003). बृहदारण्यक उपनिषद: हिंदी अनुवाद सहित (डा. सत्यव्रत शास्त्री, अनुवादक). दिल्ली: नाग प्रकाशन. (अध्याय 4, पृ. 189–193).
 7. छांदोग्य उपनिषद (2003). छांदोग्य उपनिषद: हिंदी अनुवाद सहित (डा. बालकृष्ण शास्त्री, अनुवादक). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज. (अध्याय 7, पृ. 245–249).
 8. महाभारत (2011). महाभारत: अनुशासन पर्व (गीता प्रेस संस्करण). गोरखपुर: गीता प्रेस. (अनुशासन पर्व, पृ. 214–220).